शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 सितम्बर 2023
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

कथेतर साहित्य में मानवीय मूल्य एवं प्रकृति

डॉ. शिलाची कुमारी
झारखंड केन्द्रीय विश्वविद्यालय
झारखंड, भारत

शोध संक्षेप

कथेतर शब्द का अर्थ है कथा से इतर अर्थात भिन्न। कथेतर साहित्य के अंतर्गत उन साहित्यिक विधाओं को शामिल किया जाता है, जो कथा से मुक्त होती हैं। उनमें प्रधानतः कथा-तत्व का अभाव होता है। यद्यपि कहीं-कहीं कथा आंशिक रूप में आ भी जाती है पर वह महत्त्वपूर्ण नहीं होती है। कथेतर साहित्य में निबंध, आलोचना, जीवनी, रेखाचित्र, संस्मरण, रिपोर्ताज, रपट, पत्र, साक्षात्कार, टिप्पणी, आत्मकथा, डायरी, यात्रा-वृत्तांत, कविता, गद्य गीत, हास्य-व्यंग्य आदि विधाओं को शामिल किया गया है। समय के साथ इनकी संख्या बढ़ती गई है। कथेतर विधाओं ने काल्पनिकता के स्थान पर जीवन-यथार्थ को अपनाया है। प्रस्तुत शोध पत्र में कथेतर साहित्य में मानवीय मूल्य एवं प्रकृति पर विचार किया गया है।

प्रस्तावना

सभ्यता के विकास के साथ-साथ मनुष्य का बौद्धिक विकास होता है। वह ज्ञान के विविध क्षेत्रों से जुड़ता हुआ नवीन अनुभवों को प्राप्त करता है। उन अनुभवों को अभिव्यक्त करने के लिए सृजनशील मनुष्य साहित्य की नई-नई विधाओं को जन्म देता है। यही नहीं समय के साथ-साथ विधाओं में से ही नई विधाएं जन्म लेती है। उन्नीसवीं शताब्दी के चौथे से छठे दशक तक कथेतर साहित्य का सर्वाधिक विकास हुआ, क्योंकि इस दौरान साहित्यकार के अनुभव का आकाश सर्वाधिक विस्तार पाता है।

मूल्य शब्द से तात्पर्य किसी भौतिक वस्तु अथवा मानसिक अवस्था के उस गुण से है, जिसके द्वारा मनुष्य के किसी उद्देश्य अथवा लक्ष्य की पूर्ति होती है। जब हम मानवीय मूल्य की बात करते हैं तो इससे हमारा तात्पर्य है परिस्थिति, इतिहास क्रम और काल-प्रवाह के संदर्भ में मनुष्य की स्थिति क्या है। आधुनिक युग में हम मानवीय मूल्यों का ह्रास होता गया। मानव मूल्य एक ऐसी आचार-संहिता या सद्गुणों का समूह है जिसे मानव अपने संस्कारों तथा पर्यावरण के माध्यम से अपनाकर अपने निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु अपनी जीवन.शैली का निर्माण करता है तथा अपने व्यक्तित्व का विकास करता है। मानव के मूल्यों में मनुष्य की अवधारणा, विचार, विश्वास, मनोवृत्ति, आस्था या निष्ठा आदि मानवीय गुणों का समावेश होता है। ये मानव मूल्य एक ओर व्यक्ति के अन्त:करण द्वारा नियन्त्रित होते हैं तो दूसरी ओर इनके द्वारा उसकी संस्कृति एवं परम्परा क्रमशः निस्तृत एवं परिपोषित होती हैं।

कथेतर साहित्य में मानवीय मूल्य एवं प्रकृति

'चीड़ों पर चाँदनी' यात्रा संस्मरण में 'लीदित्से : एक संस्मरण' नामक अध्याय में नाजी फौज द्वारा लीदित्से गाँव को तबाह करने का उल्लेख है। निर्मल इस घटना को मानवतावादी दृष्टिकोण से देखते हैं कि उसके गाँव के लोगों का हिंसा के विरोध में अहिंसा में कितना अटूट विश्वास है।

'अतीत के चलचित्र' के सभी पात्रों ने अपनी जिजीविषा से महादेवी को प्रभावित किया है और महादेवी को उनसे लगाव रहा है। महादेवी इस कृति की भूमिका में लिखती हैं, "इन संस्मरणों के आधार प्रदर्शनी की वस्तु न होकर मेरी अक्षय ममता के पात्र रहे हैं।"[1] *महादेवी वर्मा (1941), अतीत के चलचित्र, भारती भंडार, लीडर प्रेस, इलाहबाद, 1*

अतीत के चलचित्र महादेवी वर्मा द्वारा रचित एक रेखाचित्र है। इसमें लेखिका हमारा परिचय रामा, भाभी, बिन्दा, सबिया, बिट्टो, बालिका माँ, घीसा, अभागी स्त्री, अलोपी, बबलू तथा अलोपा इन ग्यारह चरित्रों से करवाती हैं। सभी रेखाचित्रों को उन्होंने अपने जीवन से ही लिया है, इसीलिए इनमें उनके अपने जीवन की विविध घटनाओं तथा चरित्र के विभिन्न पहलुओं का प्रत्यारोपण अनायास ही हुआ है। उन्होंने अनुभूत सत्यों को जस-का-तस अंकित किया है। महादेवी के रेखाचित्रों की यह विशेषता भी है कि उनमें चरित्र चित्रण का तत्व प्रमुख रहा है और कथ्य उसी का एक हिस्सा मात्र है। इनमें गंभीर लोक दर्शन का उद्घाटन होता चलता हैए जो हमारे जीवन की सांस्कृतिक धारा की ओर इंगित करता है। अतीत के चल-चित्र में सेवक रामा की वात्सल्यपूर्ण सेवा, भंगिन सबिया का पति-परायणता और सहनशीलता, घीसा की निश्छल गुरुभक्ति, साग-भाजी बेचने वाले अंधे अलोपी का सरल व्यक्तित्व, कुम्हार बदलू व रधिया का सरल दांपत्य प्रेम तथा पहाड़ की रमणी लछमा का महादेवी के प्रति अनुपम प्रेम, यह सब प्रसंग महादेवी के चित्रण की अकूत क्षमता का परिचय देते हैं।

महादेवी जी अतीत के चलचित्र में लिखती हैं, "उस 19 वर्ष की युवती की दयनीयता आज समझ पाती हूँ, जिसके जीवन के सुनहरे स्वप्न गुड़ियों के घरौंदे के समान दुर्दिन की वर्षा में केवल बह ही नहीं गए, वरन् उसे इतना एकाकी छोड़ गए कि उन स्वप्नों की कथा कहना भी संभव न हो सका।"[2] *सं. शहाबुद्दीन शेख, गद्य फुलवारी, पृ.103*

'अतीत के चलचित्र' के सभी पात्रों ने अपनी जिजीविषा से महादेवी को प्रभावित किया है और महादेवी को उनसे लगाव रहा है। महादेवी इस कृति की भूमिका में लिखती हैं, "इन संस्मरणों के आधार प्रदर्शनी की वस्तु न होकर मेरी अक्षय ममता के पात्र रहे हैं।"[3] *महादेवी वर्मा (1941), अतीत के चलचित्र, भारती भंडार, लीडर प्रेस, इलाहबाद : 1*

'पथ के साथी' में महादेवी वर्मा ने अपने समकालीन साहित्यकारों के जीवन दर्शन को अपने रेखाचित्र का विषय बनाया है, जिसमें कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ ठाकुर, मैथिलीशरण गुप्त, सुभद्रा कुमारी चौहान, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानन्दन पंत तथा सियारामशरण गुप्त जी है। इस संग्रह के पात्रों का सम्बन्ध समाज के शिक्षित वर्ग से है, परन्तु इनमें से अधिकांश धनाभाव से पीड़ित हैं, अतः स्वयं अभावग्रस्त होने के कारण दूसरे का दुःख अनुभव करने में समर्थ हैं। निराला की जीवनधारा से सम्बन्धित रेखाचित्र इसका सुन्दर उदाहरण है। लेकिन साहित्यकारों को साहित्य का विषय बनाना सरल भी है और दुष्कर भी। यह समझने के लिए महादेवी वर्मा की 'पथ के साथी' के भूमिका की ये पक्तियाँ स्पष्ट है, "साहित्यकार की साहित्य-सृष्टि का मूल्यांकन तो अनेक आगतअनागत युगों में हो सकता है, परन्तु उसके जीवन की कसौटी उसका अपना युग ही रहेगा।"[4] *पथ के साथी, महादेवी वर्मा, पृष्ठ सं 5, प्रकाशक-लोकभारती पेपर बैक्स, इलाहाबाद, सं. 2011*

महादेवी का 'पथ के साथी' को पढ़ने से यह स्पष्ट हो जाता है कि यह मित्र-संवाद ही न होकर जीवन को प्रभावित करने वाले प्रेरणा-स्त्रोत से युक्त है। इससे हमें जीवन जीने की कला का ज्ञान होता है, क्योंकि इसमें व्यक्ति के कृतित्व और व्यक्तित्व का वह बिंब प्रस्तुत किया गया है, जिसे महादेवी ने अपनी प्रज्ञा की आँखो से देखा। इसके सम्बन्ध में कृष्णदत्त पालीवाल का यह कथन सार्थक है, "महादेवी के ये संस्मरण इतने प्रसिद्ध हुए हैं कि अज्ञेय जैसे रचनाकार को 'स्मृति लेखा' की ओर मुड़ना पड़ा।"[5] *नवजागरण और महादेवी वर्मा का रचना-कर्मः स्त्री विमर्श के स्वर'- कृष्णदत्त पालीवाल, प्रकाशक-किताब घर, प्रथम सं. 2008, पृष्ठ सं 305*

'प्रणाम' शीर्षक से प्रारम्भ होने वाला कवीन्द्र रवीन्द्रबाबू का चित्र सूक्ष्मतर से सूक्ष्मतर और फिर स्थूलता की ओर अग्रसर होता है। लेखिका सामान्य कथन के लिए प्राकृतिक दृश्यों का आधार ग्रहण करती हैं और रवीन्द्रनाथ ठाकुर की विशेषता को सामने लाती हैं और रवीन्द्र के तीन विभिन्न परिवेशों में देखने का चित्रण महादेवी जी करती हैं। 'पथ के साथी' में कवीन्द्र रवीन्द्र के बाह्य रूप का शब्दों द्वारा किया हुआ चित्रण दृष्टव्य है, "मुख की सौम्यता को घेरे हुए वह रजत आलोकमण्डल जैसा केश कलाप। मानो समय ने ज्ञान को अनुभव के उजाले झीने तन्तु में काट कर उससे जीवन का मुकुट बना दिया है। केशों की उज्ज्वलता के लिए दीप्त दर्पण जैसे माथे पर समानान्तर रहकर साथ चलने वाली रेखाएँ जैसे लक्ष्य-पथ पर हृदय के विश्राम चिन्ह हो।"[6] *'पथ के साथी'- महादेवी वर्मा, पृष्ठ सं 11*

महादेवी की सर्जनात्मकता रवीन्द्रनाथ पर लिखा गया 'प्रणाम' में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है, जिसमें स्मृति का सजग अंकन है तथा जिसके सम्बन्ध में कृष्णदत्त पालीवाल लिखते हैं, "रवींद्रनाथ के महाप्राण पर लिखा गया महादेवी का यह 'प्रणाम' स्मरण इतना प्रभावी सर्जनात्मक है कि हिन्दी का गद्य इस संपन्न सामर्थ्य से फूला नहीं समाता है। पूरा संस्मरण बिंब बहुल भाषा का उज्ज्वल नीलमणि से निर्मित लोक ही है।"[7] *नवजागरण और महादेवी वर्मा का रचना कर्म : स्त्री विमर्श के स्वर, कृष्णदत्त पालीवाल, पृष्ठ 313*

इस संग्रह का दूसरा संस्मरण मैथिलीशरण गुप्त जी पर है जिनकी 'अहो' व 'कहो' तुकबन्दी पर मुग्ध महादेवी ने अपनी स्मृति का प्रमाण दिया है। गुप्त जी के प्रति महादेवी की गहरी आस्था थी, जिसका उल्लेख इन पंक्तियों से मिलता है, "मै गुप्त जी को कब से जानती हूँ, इस सीधे से प्रश्न का मुझसे आज तक कोई सीधा-सा उत्तर नहीं बन पड़ा। प्रश्न के साथ ही मेरी स्मृति अतीत के एक धूमिल पृष्ठ पर उगुंली रख देती है जिस पर न वर्षए न तिथि आदि की रेखाएँ हैं और न परिस्थितियों के रंग। केवल कवि बनने के प्रयास में बेसुध एक बालिका का छायाचित्र उभर आता है।"[8] *'पथ के साथी', महादेवी वर्मा, पृष्ठ सं 23*

इन पक्तियों से महादेवी की स्मृति का स्पष्ट प्रमाण मिलता है जो उनकी स्मृति सृजन में उपयोगी सिद्ध हुई है। इसी प्रकार महादेवी जी ने बहन सुभद्रा कुमारी को उनके कवि रूप में देखने से पूर्व सहज सख्य भाव से अपनी सम्पूर्ण संवेदनशीलता के साथ अपना लिया था जिस कारण यह रेखाचित्र अत्यंत जीवन्त प्रतीत होता है, "एक सातवीं कक्षा की विद्यार्थिनी, एक पाँचवी कक्षा की विद्यार्थिनी से प्रश्न करती है, "क्या तुम कविता लिखती हो ? दूसरी ने सिर हिलाकर ऐसी अस्वीकृति दी जिसमें 'हाँ' और 'नहीं' तरल होकर एक हो गये थे। प्रश्न करने वाली ने इस स्वीकृति-अस्वीकृति की सन्धि से खीझ कर कहा, "तुम्हारी क्लास की लड़कियाँ तो कहती है कि तुम गणित की कापी तक में कविता लिखती हो। दिखाओ अपनी

कॉपी और उत्तर की प्रतीक्षा में समय नष्ट न कर कविता लिखने की अपराधिनी को हाथ पकड़कर खींचती हुई उसके कमरे में डेस्क के पास ले गई। नित्य व्यवहार में आने वाली गणित की कॉपी छिपाना सम्भव न था, अतः उसके साथ अंकों के बीच में अनधिकार सिकुड़ कर बैठी हुई तुकबन्दियाँ अनायास पकड़ में आ गई।"9 इसके बाद का यह चित्रण और मार्मिक है, "तुमने सबसे क्यों बताया ? का सहारा उत्तर था' हमें भी तो यह सहना पड़ता है। अच्छा हुआ अब दो साथी हो गए। कितनी स्वाभाविकता है दो बालिकाओं के संवाद में, बाल सुलभ विशेषताएँ उभर गई हैं। इसमें महादेवी वर्मा की स्मृति उच्च शिखरों को छूती नजर आ रही है।

सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' के रेखाचित्र में महादेवी वर्मा की आत्मा रमी है वे उन्हें राखीबन्द भाई बनाने से लेकर उनके पारिवारिक, निजी तथा कलात्मक रूपों तक की मर्मोद्घारिनी झाँकी देती चलती हैं "उस दिन मैं बिना कुछ सोचे हुए ही भाई निरालाजी से पूछ बैठी थी। आपके किसी ने राखी नहीं बाँधी। पर अपने प्रश्न के उत्तर ने मुझे क्षण भर के लिए चौंका दिया ! 'कौन बहिन हम ऐसे भुक्खड़ को भाई बनावेगी।"[9] *वही पृष्ठ सं 51*

इसी प्रकार जिस दिन मैथिलीशरण गुप्त निराला जी के अतिथि बने, उस दृश्य को भुला पाना स्वाभाविक नहीं है, बगल में गुप्त जी के बिछौने का बंडल दवा, दियासलाई के क्षण-प्रकाश क्षण-अन्धकार में तंग सीढ़ियों का मार्ग दिखाते हुए निराला जी हमें उस कक्ष में ले गए जो उनकी कठोर साहित्य-साधना का मूल साक्षी रहा है। आले पर कपड़े की आधी जली बत्ती से भरा पर तेल से खाली मिट्टी का दिया मानों अपने नाम की सार्थकता के लिए जल उठने का प्रयास कर रहा था।"[10] *वही, पृष्ठ सं 52-53*

इस संस्मरण में महादेवी के स्मृति की छाप का सर्वोत्कृष्ट रूप चित्रित हुआ है।

प्रसाद जी का चित्र निराला की तरह न इतनी आत्मीयता पा सका है और न अपनी विविधता में ही मुखरित हो पाया है, फिर भी महादेवी वर्मा की स्मृति की छाप इन पंक्ति से चलती है, "मेरी हँसी देखकर या मुझे भारी भरकम नाम के विपरीत देख प्रसाद जी ने निश्चय हँसी के साथ कहा, "आप तो महादेवी जी जान पड़ती। मैंने भी वैसे ही प्रश्न में उत्तर दिया, "आप ही कहाँ कवि प्रसाद लगते है जो चित्र में बौद्ध भिक्षु जैसे हैं।"[11] *वही, पृष्ठ सं 67*

यह उदाहरण महादेवी की स्मृति की सर्जनात्मक उपयोग को सिद्ध करता है।

सुमित्रानन्दन पंत के प्रति अपनी परिचयशीलता की स्वीकृति के साथ महादेवी वर्मा ने एक मनोरंजक प्रसंग द्वारा उसके आरम्भ की बात उठाई है। महादेवी वर्मा की ये पक्तियाँ स्पष्ट है, "जब वे तीसरी कक्षा के बाल-विद्यार्थी थे, तभी उन्हें अपने गोसाईदत्त नाम की कवित्वहीनता अखरने लगी। सुमित्रानन्दन जैसा श्रुत्तिमधुर नाम अपने लिए खोज लेने वाली उनकी असाधारण बुद्धि ने जीवन और साहित्य के अनेक क्षेत्रों में अपनी सृजनशीलता का परिचय दिया है।"[12] *वही, पृष्ठ सं 79*

इसी प्रकार सियारामशरण गुप्त के रेखाचित्र भी है, जो संक्षिप्त होकर भी गहरी छाप छोड़ते हैं, कुछ नाटा कद, दुर्बल शरीर और कृश हाथ, पैर, लम्बे उलझे रूखे से बाल, लम्बाई लिए सूखे मुख, ओंठ और विशेष तरल आँखों के साथ भाई शियारामशरण ऐसे लगते हैं मानो ठेठ भारतीय मिट्टी की बनी पकी कोई मूर्ति होए जिसकी आँखों पर स्निग्धता का गाढ़ा रंग फेर कर शिल्पी, शेष अंगों पर फेरना भूल गया है।

महादेवी वर्मा के 'पथ के साथी' के सन्दर्भ में यह कथन उल्लेखनीय है, "जहाँ-जहाँ उनके निरीक्षण में निकट परिचय संवाद और हार्दिकता है वहाँ वे बहुत सर्जनात्मक वृत्त रचती है। इस दृष्टि से निराला और सुभद्रा कुमारी चौहान का संस्मरण जितना बेजोड़ है, जयशंकर प्रसाद तथा शियारामशरण गुप्त का उतना ही कमजोर है।"[13] *लेखिकाओं की दृष्टि में महादेवी वर्मा, सं. चन्द्रा सदायत प्रकाशक- नेशनल बुक ट्रस्ट इण्डिया, 2011, पृष्ठ सं 80*

'बसेरे से दूर' हरिवंशराय बच्चन की प्रसिद्ध आत्मकथा है। यह उनकी आत्मकथाओं का तीसरा भाग है। यह तीसरा भाग होते हुए भी अपने-आप में पूर्ण है। स्वयं हरिवंशराय बच्चन ने इसकी पूर्णता के सम्बन्ध में भूमिका में लिखते हैं, "बसेरे से दूर' के कुछ ऐसे पाठकों की भी कल्पना करता हूँ, जो इसके पूर्व की कथा से पूर्णतया अपरिचित या खण्डशः परिचित हों। मैं उनसे यह तो न कहना चाहूँगा कि इसके पूर्व की कथा पढ़े बगैर वे इसे न पढ़ें क्योंकि मैंने यह प्रयत्न किया है कि प्रत्येक खण्ड को अपने में पूर्ण इकाई के रूप में प्रस्तत करूँ।"[14] *बसेरे से दूर हरिवंश राय बच्चन, भूमिका, पृष्ठ 6*

साहित्य में अभिव्यक्ति के विविध रूपों में मानव जीवन के सर्वाधिक निकट मानी जाने वाली विधा 'आत्मकथा' है। आत्मकथा में रचनाकार अपने संपूर्ण जीवन के किसी अंश अथवा घटना का क्रमबद्ध वर्णन प्रस्तुत करता है। आत्मकथा में कल्पनाप्रवणता और रागपरक वैयक्तिक अनुभूति का प्राधान्य होता है। हिन्दी साहित्य के देदीप्यमान आत्मकथाकार डॉ. हरिवंशराय बच्चन की आत्मकथा हिन्दी-साहित्य की एक कालजयी कृति है। उन्होंने अपने जीवन की तस्वीर को 'क्या भूलूँ क्या याद करूँ, 'नीड़ का निर्माण फिर', 'बसेरे से दूर' एवं 'दश द्वार से सोपान तक में' रूपान्तरित किया है। यह बहुप्रशंसित आत्मकथा एक महागाथा है जो उनके जीवन और साहित्य का वृत्तान्त ही नहीं कहती अपितु उत्तर छायावादी युग के साहित्यिक परिदृश्य को भी प्रस्तुत करती है।

बच्चन का काल के अनुरूप तथा विभिन्न परिस्थितियों में रहते हुए अपने आपको सहृदयों के समक्ष प्रस्तुत करना और विभिन्न मानसिकताओं के दौर से गुज़रते हुए आत्मविवरण को प्रस्तुत किया गया है। बच्चन की बाल्यावस्था का अबोधपन, युवामन का आकर्षण, प्रेमानुभूति, स्त्री-पुरुष सम्बन्धों, पारिवारिक सम्बन्धों तथा स्वानुभूतियों से सम्बन्धित अनेक प्रसंगों का अत्यन्त स्वाभाविक चित्रण बड़ी सहजता और तन्मयता के साथ किया गया है।

बच्चन द्वारा उम्र के विभिन्न पड़ावों में अलग-अलग रूपों मे सोचना जैसे, बालरूप, युवारूप और प्रौढ़ रूप एवं वृद्ध रूप इत्यादि उनकी आत्मकथा में मुखर हुआ है। उनकी आत्मकथा में पग-पग पर उनके मनोसंवेग विभिन्न रूपों में उभर कर आते हैं।

अमृतराय की लेखकीय सजगता और कलम का सिपाही मे प्रेमचंद जी के युग जीवन-यथार्थ, तत्कालीन सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक परिवेश के साथ उनके जीवन के अभावों का यथार्थ चित्रण करके ईमानदारी का परिचय भी दिया है। अमृत राय ने 'कलम का सिपाही' में लिखा है कि उनकी अंतिम यात्रा में कुछ ही लोग थे। जब अर्थी जा रही थी, तो रास्ते में किसी ने पूछा, कौन था ? साथ खड़े आदमी ने कहा कोई मास्टर था, मर गया।"[15] *राय, अमृत'कलम का सिपाही', पृष्ठ 25* इनसे पता चलता है कि हम प्रेमचंद के साथ कितना न्याय कर पाए। वैसे भी हम कौन सा अपने लेखकों, साहित्यकारों के साथ न्याय कर पाते हैं।

किसी भी लेखक की जीवनी से जुड़ा सब से पहला सवाल यह उठता है कि किसी भी लेखक के जीवन में किसी को क्यों दिलचस्पी होगी ? लेखक का लिखा महत्त्वपूर्ण है, उस का जिया भी क्या मूल्यवान है ? इस प्रश्न का उत्तर प्रेमचंद की जीवनी लिखते हुए अमृत राय ने दिया है।अमृत राय ने 'कलम का सिपाही' में लिखा है कि "जीवन नित्य जैसा जिया जाता है वही रसायन क्रिया से साहित्य बन जाता है। प्राण का आवेग लेकर, विवेक की निर्धूम अग्नि में तपकर, स्वप्न को भविष्य बनाकर।

'निराला की साहित्य साधना' कृति तीन वृहतकाय खंडों में लिखी हुई जीवनीपरक आलोचना है इन तीनों ही खंडों के प्रकाशन काल में प्रयाप्त अंतर है। प्रथम खंड 1969, द्वितीय खंड 1972 और तीसरा खंड 1976 में प्रकाशित हुआ। इन तीनों खंडों में बहुचर्चित प्रथम खंड रहा है, क्योंकि इस खंड में रामविलास जी ने निराला के जीवन के अंतरंग को बहुत निकट से अनुभव के आधार पर आँका है और उसे भावनात्मक ऊर्जा के साथ महिमामंडित किया है। निराला के जीवन के आरोह और अवरोह, दोनों पक्षों का संतुलित चित्रण प्रथम खंड में किया गया है। इस कृति को रामविलास जी ने शिवपूजन सहाय की पुण्य स्मृति को सादर समर्पित किया है जिसे निराला जी ने स्वयं सराहा। इस ग्रंथ को लिखने के उद्देश्य को रामविलास जी ने पुस्तक की भूमिका में स्पष्ट कर दिया है। उन्हीं के शब्दों में, "इसे लिखते समय मेरा ध्यान उनके व्यक्तित्व के अध्ययन की ओर रहा है। पंद्रह अध्यायों में जीवन कथा है, अगले तीन अध्यायों में उनके व्यक्तित्व का विश्लेषण है। एक अध्याय पंत और निराला के व्यक्तित्वों पर उनके साम्य और वैषम्य पर है। अंतिम अध्याय में तथ्य संग्रह और जीवनी लिखने की समस्याओं का चित्रण है। यह एक साहित्यकार का जीवन चरित है, इसलिए इसमे किसी हद तक उनके साहित्य का मूल्यांकन भी शामिल है पर यह पुस्तक उनके साहित्य की आलोचना नहीं है। निराला के पारिवारिक, सामाजिक परिवेश सेए उस युग की सांस्कृतिक परिस्थितियों से, उनके जीवन के बाह्य रूपों के साथ उनके अंतरजगत से पाठकों को परिचित कराना मेरा उद्देश्य है।"[16] *शर्मा, रामविलास, निराला की साहित्य साधना - प्रथम खंड - भूमिका*

'निराला की साहित्य साधना' के प्रथम खंड में वे एक महत्वपूर्ण तथ्य उद्घाटित करते हैं कि निराला के साहित्य में निरूपित प्रेम व कामुकता के सन्दर्भ में उनका स्वयं पर मुग्ध होना और उसी मुग्धता के आलम में स्वयं को विविध रूपों में चित्रित करना उनके उदार कवि व्यक्तित्व का परिचायक है।

'निराला अर्धनारीश्वर थे। देखने में सुंदर बड़ी-बड़ी आँखें, लहरियादार बाल, कलकतिया धोती - कुल्ली भाट उन पर मुग्ध हुए हैं वह जानते थे। वह स्वयं अपने रूप पर मुग्ध थे, इसलिए दूसरा मुग्ध हो तो उन्हें प्रसन्नता ही होती थी। 'मतवाला-मंडल में महादेवप्रसाद सेठ उनके रूप के प्रशंसक थे, मुंशी नवजादिकलाल उनकी भौंहों की तुलना बिहारी कि नायिकाओं की भौंहों से करते थे। हर पुरुष में स्त्रीत्व है, इसे वह कामशास्त्र और आधुनिक विज्ञान की विशेष खोज मानते थे। बहुत दिन बाद 'तुलसीदास' में छपने के लिए जब उन्होंने फोटो खिंचाया, तब उसमें अपनी 'फेमिनिन ग्रेसेज़' पर खुद ही मुग्ध हुए। अपने को स्त्री मानकर उन्होंने कुछ कविताएँ लिखी थीं जैसी 'अनामिका' में : प्रात क्यों नहीं जगाया नाथ। नारीत्व की भावना, आत्मरति, समर्पण का भाव - इनके साथ पुरुषत्व, आसक्ति, आक्रामक व्यवहार, यह सब भी उनमें था।"[17] *शर्मा,रामविलास,1990,निराला की साहित्य-साधना(भाग-1),राजकमल प्रकाशन प्रा. लि.,नयी दिल्ली,तीसरा सं.,पृ.427*

आधुनिक हिन्दी साहित्य में राहुल सांकृत्यायन बड़े घुमक्कडी प्रवृत्ति के साहित्यकार माने जाते हैं राहुल के बाद एक अज्ञेय ही हैं, जिन्हें हिन्दी साहित्य में सबसे अधिक 'घुमक्कडी प्रवृत्ति' के साहित्यकार के रूप में पहचान मिली है। 'राहों के अन्वेषी' के रूप विख्यात अज्ञेय ने अपने जीवन में देश-विदेश की अनेक यात्राएं की। वे न कभी थके, और ना ही कभी रुके। 'रमता राम' की तरह सदा भ्रमण करते रहे। 'बहता पानी निर्मल' शीर्षक वृत्तांत में अज्ञेय लिखते हैं "यों तो वास्तविक जीवन में भी काफ़ी घूमा-भटका हूं, पर उस से कभी तृप्ति नहीं हुई हमेशा मन में यही रहा कि कहीं और चलें, कोई नयी जगह देखें और इस लालसा ने अभी भी पीछा नहीं छोड़ा है।"[18] *'अरे यायावर रहेगा याद', अज्ञेय, पृ.131*

महापंडित राहुल सांकृत्यायन हिंदी में 'घुमक्कड़-शास्त्र' के प्रणेता थे। वो जीवन-भर भ्रमणशील रहे। ज्ञान के अर्जन में उन्होंने सुदूर अंचलों की यात्राएं कीं। उन पर अनेक किताबें लिखीं। 'किन्नर देश में' हिमाचल प्रदेश में तिब्बत सीमा पर सतलुज नदी की उपत्यका में बसे सुरम्य इलाके किन्नौर की यात्रा-कथा है। यह यात्रा उन्होंने साल 1948 में की थी। मूल शब्द 'किन्नर' है, इसलिए राहुलजी सर्वत्र इसी नाम का प्रयोग करते हैं। कभी बस और घोड़े के सहारे और कभी कई दफा पैदल भी की गई यात्रा का वर्णन करते हुए राहुलजी क्षेत्र के इतिहास, भूगोल, वनस्पति, लोक-संस्कृति आदि अनेक पहलुओं की जानकारी जुटाते हैं। दिलचस्प पहलू वह है जहां वे अपने जैसे घुमक्कड़ों की खोज कर उनका संक्षिप्त जीवन-चरित भी लिखते हैं। उन्हें एक ऐसा यात्री मिला जो पांच बार कैलाश-मानसरोवर हो आया था। उसने सैकड़ों यात्राएं कीं और डाकुओं ही नहीं, मौत से दो-चार हुआ और बच आया।

राहुल सांकृत्यायन ने किन्नर देश को देवताओं का देश कहा है वह यहाँ के प्राकृतिक सौन्दर्य एवं भौगोलिक परिस्थिति का वर्णन करते हैं। उन्होंने लिखा है, "किन्नर देश हिमाचल का एक रमणीय भाग है जो तिब्बत कि सीमा पर सतलुज की उपत्यका में सत्तर मील लंबा और प्रायरू उतना ही चौड़ा बसा हुआ है इसके निम्नतम भूमि पाँच हज़ार फुट से नीचे नहीं है और ऊंची बस्तियाँ 11 हज़ार फुट से भी उपर बसी हुई हैं, इसका थोड़ा ही सा भाग जहां मानसून के बादल खुल कर पैर रखने पाते हैं, नहीं तो अन्यत्र उन्हे फूँक.फूँक पैर रखना पड़ता है।"[19] *सांकृत्यायन, राहुल'किन्नर देश में', पृष्ठ 51*

निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं मानवीय मूल्य व्यापक अवधारणा है। इसमें सामान्य रूप से उन सभी मूल्यों को समाहित किया जाना चाहिये जो कि मानव के सर्वांगीण विकास से सम्बन्धित हैं। मानवीय मूल्यों में सम्पूर्ण मानव जाति का कल्याण निहित होता है। अर्थात् मानवीय मूल्य व्यापकता एवं सार्वजनिक हित की ओर अग्रसर होते हैं। कथेतर विधाओं में मानवीय मूल्यों एवं प्रकृति के प्रति गहन चिंतन देख सकते हैं। महादेवी वर्मा, निराला, निर्मल वर्मा, मोहन राकेश, राहुल सांस्कृत्यायन के कथेतर साहित्य में प्रकृति एवं मानवीय पक्ष का चित्रण है।

संदर्भ ग्रन्थ

1 वर्मा महादेवी, (1992), अतीत के चलचित्र, राधाकृष्णा प्रकाशन, नई दिल्ली
2 वर्मा महादेवी, (2008) स्मृति की रेखाएँ, लोकभारती प्रकाशन, नई दिल्ली
3 वर्मा महादेवी, (2009) पथ के साथी, लोकभारती प्रकाशन, नई दिल्ली
4 प्रभाकर विष्णु, (1965) कुछ शब्द कुछ रेखाएँ, सतसाहित्य प्रकाशन, नई दिल्ली

5 शर्मा रामविलास, (1997) निराला की साहित्य साधना, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली

6 पांडे गंगा प्रसाद, (1968) महाप्राण निराला, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद

7 राकेश मोहन, (2010) आखिरी चट्टान, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली

8 सांकृत्यायन राहुल (2015), किन्नर देश में, किताब महल प्रकाशन, दिल्ली

9 सांकृत्यायन राहुल (2020), घुमक्कड़ शास्त्र, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली

सहायक ग्रंथ

1 त्रिपाठी, विश्वनाथ (2007) हिन्दी साहित्य का सरल इतिहास, ओरियंट ब्लैकस्वान, दिल्ली

2 सिंह, बच्चन, (2018) 15वां संस्करण) हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास, राजकमल प्रकाशन

3 द्विवेदी, हजारीप्रसाद, (1991) हिन्दी साहित्य की भूमिका, राजकमल प्रकाशन

4 राजे, सुमन (2003) हिन्दी साहित्य का आधा इतिहास, भारतीय ज्ञानपीठ

5 राय, गोपाल, सांकृत, सत्यकेतु (2015) उन्नीसवीं शताब्दी का हिन्दी साहित्य, वाणी प्रकाशन

6 शुक्ल, रामचन्द्र (2000) हिन्दी साहित्य का इतिहास, लोकभरती प्रकाशन, इलाहाबाद

7 तिवारी, रामचन्द्र (2014) हिन्दी का गद्य साहित्य, विश्वविद्यालय प्रकाशन, गोरखपुर

8 शर्मा, जगन्नाथ प्रसाद, (1990) हिन्दी की गद्य शैली का विकास, इंडियन प्रेस लिमिटेड, प्रयाग

9 शर्मा, जगन्नाथ प्रसाद, (1990) हिन्दी की गद्य शैली का विकासष् इंडियन प्रेस लिमिटेड प्रयाग